हिन्दी

भाषा की संघर्ष यात्रा और हिन्दू-इतर रचनाकार

डॉ. संध्या सिलावट

हिंदी भाषा की संघर्ष यात्रा और हिंदू इतर रचनाकार

डॉ. संध्या सिलावट

प्रवासी प्रेम पब्लिशिंग, भारत

ISBN 978-81-981364-9-7

पहला संस्करण: 2025 (शक 1947)

© डॉ. संध्या सिलावट

साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, संस्कृति विभाग, भोपाल के सहयोग से प्रकाशित

समर्पण

सरल, सर्वसुलभ, सहज जनप्रतिनिधि

श्रीमान तुलसी सिलावट जी

को

सादर समर्पित

अनुक्रम

भूमिका 5

1. बौद्ध धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले रचनाकार 93

2. जैन धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले रचनाकार 129

3. मुस्लिम धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले ज्ञात समय के रचनाकार 236

4. मुस्लिम धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले अज्ञात समय के रचनाकार 447

5. दक्खिनी हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले मुस्लिम धर्म के रचनाकार 487

6. सिख धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले रचनाकार 546

7. ईसाई धर्म के हिंदी साहित्य में योगदान करने वाले रचनाकार 577

परिशिष्ट 672

भूमिका

भारत देश में दीर्घकाल से हिंदुओं के साथ-साथ अन्य धर्मों को मानने वाले भी निवास करते आ रहे हैं। जैसे बौद्ध, जैन, मुस्लिम, सिख, ईसाई और पारसी आदि। यहाँ की भाषा व संस्कृति को उन्होंने अपनाया भी है और उसे प्रभावित भी किया है। भारतीय समाज का हिंदू इतर अन्य धर्मों को मानने वाले समुदाय एक अभिन्न अंग है। देश की स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम 1992 के तहत छह धार्मिक समुदायों मुस्लिम, ईसाई, सिख, बौद्ध, पारसी और जैन को अल्पसंख्यक अधिसूचित किया गया है। सामान्यतः अल्पसंख्यक का तात्पर्य समूह से लिया जाता है जो धर्म, भाषा और जाति की दृष्टि से बहुसंख्यक समुदाय से भिन्न एवं कम संख्या हो। भारतीय समाज में 'अल्पसंख्यक' शब्द का प्रयोग धार्मिक दृष्टि से अन्य जनसंख्या वाले संप्रदाय के लोगों के लिए किया जाता है।

हिंदी साहित्य की परंपरा प्राचीन समय से चलती आ रही है, तभी से हिंदू इतर रचनाकार उसमें अपना सहयोग करते आ रहे हैं। मैं यहाँ हिंदू इतर रचनाकारों द्वारा हिंदी साहित्य में किए गए योगदान के विषय में वर्णन करने जा रही हूँ। यहाँ मैंने स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व जन्मे रचनाकारों को ही लिया है।

यह कहना कठिन है कि किस तिथि से हिंदी भाषा का आरंभ हुआ। सन् एक हजार ईसवी से नव्य भारतीय भाषाओं का उदय माना जाता है।

एक बोलचाल का और दूसरा मानक साहित्यिक, प्रत्येक भाषा के दो रूप होते हैं। प्राचीन भारतीय भाषा बोलचाल के रूप में 'लौकिक संस्कृत' और साहित्यिक रूप में 'वैदिक संस्कृत' कहलाती थी । वैदिक संस्कृत के लौकिक संस्कृत से कट जाने, रूढ़ और जड़ हो जाने पर पाणिनि, पतंजलि, कात्यायन आदि ने लौकिक संस्कृत की क्षेत्रीय अनेक रूपता को हटाते हुए उसे संस्कारित और व्याकरण सम्मत रूप दिया। पुनः ईसा पूर्व 500 ईसवी के लगभग उसका रूप साहित्यिक हो गया और वह जनता की भाषा से कटकर दूर हो गई। संस्कृत की व्याकरणिक जकड़बंदी को न मान जनभाषा, नदी की भाँति देश-काल अंतर से अपना रूप बदलते हुए निरंतर आगे बढ़ती रही। भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार, ईसा पूर्व 500 ईसवी से लेकर ईसवी सन् 1000 तक का काल 'मध्यकालीन आर्यभाषा' का है, जिसे प्राकृत भाषा (पालि, प्राकृत, अपभ्रंश) भी कहा जाता है । नमिसाधु के अनुसार, 'प्राकृत' का अर्थ है जनता की प्रकृत या अकृत्रिम यानी सहज बोलचाल की भाषा।

प्राकृत भाषा संस्कृत का नहीं, अपितु अपने काल की जनभाषा का विकसित रूप है। ऐतिहासिक कालक्रमानुसार ईसा पूर्व 500 ईसवी से ईसवी सन् के प्रारंभ तक का समय प्रथम प्राकृत का है, जो 'पालि' कहलाता है। द्वितीय प्राकृत का समय ईसवी सन् के प्रारंभ से लेकर ईसवी सन् 500 तक का है, जो 'प्राकृत' कहलाता है। तृतीय प्राकृत का समय ईसवी सन् 500 से ईसा की दसवीं शताब्दी तक का है, जो 'अपभ्रंश' कहलाता है। यह भारतीय आर्यभाषा की मध्यकालीन अवस्था का अंतिम चरण है। इसे संस्कृत वैयाकरणों और काव्यशास्त्रियों ने अपनी रचनाओं में 'अपभ्रंश' और 'अपभ्रष्ट' की संज्ञा दी है। उनके